Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 SHISRRJ | Volume 1 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक चिन्तन एवं मानव निर्माणकारी शिक्षा

डॉ0 सीमा मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर, कमला नेहरू पी.जी. कॉलेज, तेजगांव, रायबरेली, उत्तर प्रदेश।

शोधसारांश– बहुआयामी प्रतिभा के धनी, अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिलब्ध आध्यात्मिक संत, युवाओं के ऊर्जा के अजस्र स्रोत, राष्ट्र के नवनिर्माण हेतु विशुद्ध अन्तःकरण से दृढ़ एवं मानव कल्याणोंमुखी दर्शन के प्रचारक स्वामी विवेकानन्द जी का शिक्षा दर्शन अद्वैतवाद से अनुप्राणित है। अद्वैतवेदान्त के अनुसार आत्मा शाश्वत् और सर्वव्यापी है तथा प्रत्येक जीव में ईश्वरीय सत्ता विद्यमान है। स्वामी जी का मानना था कि मनुष्य के अन्दर की आत्मा निराकार, सर्वशक्तिमान एवं सर्वत्र है इसलिए मनुष्य अपने में अनन्त ज्ञान एवं अनन्त शक्ति का स्रोत है परन्तु माया द्वारा निर्मित मानव शरीर में सर्वशक्तिमान आत्मा जीवात्मा के रूप में संकुचित हो जाती है और मनुष्य अपने अनन्त ज्ञान एवं अनन्त शक्ति को पहचान नहीं पाता। इस मायारूपी परदे के हटते ही मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान जाता है और आत्मज्ञानी हो जाता है जिसे स्वामी जी ने आत्मानुभूति करना कहा है। वे मानव के समग्र विकास के लिए वेदान्तयुक्त आधुनिक ज्ञान विज्ञान की शिक्षा व्यवस्था का क्रियान्वयन चाहते थे। राष्ट्र को निर्धनता एवं अज्ञानता से मुक्ति दिलाने, दीन दुःखियों के उद्धार हेतु ऐसी शिक्षा चाहते थे जो जीवन का निर्माण करने वाली चरित्र का गठन करने वाली तथा मानव का निर्माण करने वाली हो।

मुख्य शब्द– स्वामी विवेकानन्द, शैक्षिक, चिन्तन, मानव, निर्माणकारी, शिक्षा, आत्मानुभूति, अद्वैतवाद।

बहुआयामी प्रतिभा के धनी, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति–लब्ध, आध्यात्मिक संत, युवाओं के ऊर्जा के अजस्र स्रोत, राष्ट्र के नवनिर्माण हेतु विशुद्ध अन्तःकरण से दृढ़ एवं कल्याणोन्मुखी दर्शन के प्रचारक स्वामी विवेकानन्द जी के दार्शनिक विचार भारतीय दर्शन के वेदान्त शाखा से प्रेरित हैं। उनके अनुसार आत्मा शाश्वत् और सर्वव्यापी है। स्वामी जी का मानना था कि मनुष्य के अन्दर की आत्मा निराकार, सर्वशक्तिमान एवं सर्वत्र है इसलिए मनुष्य अपने में अनन्त ज्ञान एवं अनन्त शक्ति का स्रोत है परन्तु माया द्वारा निर्मित मानव शरीर में सर्वव्यापक, सर्वज्ञ एवं सर्वशक्तिमान आत्मा जीवात्मा के रूप में संकुचित हो जाती है और मनुष्य अपने अनन्त ज्ञान एवं अनन्त शक्ति को पहचान नहीं पाता। माया रूपी परदा हटते ही वह अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान जाता है और मनुष्य ज्ञानी हो जाता है। इस माया रूपी परदे को हटाने के लिए स्वामी जी आत्मानुभूति को आवश्यक मानते हैं और आत्मानुभूति हेतु एकाग्रता को आवश्यक बतलाते है।

स्वामी विवेकानन्द जी शिक्षा द्वारा मनुष्य को लौकिक एवं पारलौकिक दोनों जीवनों के लिए तैयार करना चहते थे। स्वामी जी के शैक्षिक विचारों में मानव निर्माण एवं युग निर्माण के विचार सैकड़ों वर्ष बाद भी आज अत्यन्त

महत्वपूर्ण हैं। सच्चे वेदान्ती की भांति स्वामी जी मानव में आस्था रखते थे। उनका विचार था कि मानव शरीर में पायी जाने वाली जीवात्मा की प्रतिष्ठा करने से ईश्वर की पूजा होती है कदाचित सभी प्राणी ईश्वरोपासना के मन्दिर हैं वे संसार के सभी मानवों को ब्रह्ममय मानते थे न कि केवल मांसपिण्ड स्वरूप में। वे सम्पूर्ण मानव में ईश्वर के दर्शन करते थे तथा मानव सेवा को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानते थे। उनका मानना था कि मानव पंचशील तत्वों से बना है उसका सम्बन्ध भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों जगत से है, मनुष्य ज्ञान का अमीम भण्डार है मनुष्य ही श्रेष्ठतम जीव है, मनुष्य से श्रेष्ठतर और कोई जीव नहीं।

स्वामी जी वेदान्ती थे स्वामी जी ने वेदान्त दर्शन के अन्तर्गत इस तथ्य को प्रस्तुत किया कि वेदान्त ऐसे ईश्वर में विश्वास नही करता जो स्वर्ग में तो मुझे आनन्द देगा पर इस जगत में मुझे रोटी भी नही दे सकता। स्वामी जी के अनुसार वेदान्त संसार को त्यागने का उपदेश नहीं बल्कि समस्त विश्व को बह्ममय बनाने का पाठ सिखाता है। स्वामी जी ने भारत–भ्रमण किया अपनी आंखों से भयानक निर्धनता, अज्ञानता, निरक्षरता, अत्यन्त निम्न जीवन स्तर, धार्मिक आडम्बर, अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियों आदि के रूप में विपन्न भारत का दर्शन किया। लोग निर्धनता तथा अज्ञानता के कारण पशुवत् जीवन व्यतीत कर रहे थे। इस अमानवीय स्थिति को देखकर स्वामी जी का हृदय अत्यन्त द्रवित हो गया और राष्ट्र को निर्धनता और अज्ञानता से मुक्ति दिलाने व राष्ट्र के पुननिर्माण में संलग्न होने का संकल्प लिया और आजीवन मानवता की सेवा को अपना जीवन लक्ष्य निर्धारित कर लिया।

स्वामी जी का शैक्षिक दर्शन भी इसी लक्ष्य की ओर केन्द्रित एवं वेदान्त शाखा पर ही आधारित है। उनका शैक्षिक चिन्तन पूर्ण मानव के निर्माण हेतु व उसके सर्वांगीण विकास पर केन्द्रित है। स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार सभी प्रकार की शिक्षा और अभ्यास का उद्देश्य **'मनुष्य निर्माण'** होना चाहिए सारे प्रशिक्षण का अन्तिम ध्येय मनुष्य का विकास करना हो जिस अभ्यास से मनुष्य की इच्छा शक्ति का प्रवाह और प्रकाश संयमित होकर फलदायी बन सके उसी का नाम शिक्षा है। वे सर्वत्र सभी क्षेत्रों में मनुष्य बनाने वाली शिक्षा ही चाहते थे। स्वामी जी तत्कालीन शिक्षा प्रणाली से दुःखी थे। स्वामी जी ने अनुसार पाठशालाओं में दी जने वाली शिक्षा मनुष्य बनाने वाली शिक्षा नहीं है क्योंकि तत्कालीन शिक्षा निषेधात्मक है जिसने निरन्तर इच्छाशक्ति को बलपूर्वक पीढ़ी दर पीढ़ी रोककर प्रायः नष्ट कर दिया है जिसके प्रभाव से नये विचारों की ही क्या पुराने विचार भी क्रमशः लुप्त होते जा रहे हैं। स्वामी जी के शब्दों में **''क्या वह शिक्षा है, जो मनुष्य को धीरे–धीरे मशीन बना रही है? मेरे विचार से जो स्वयंचालित यंत्र के समान सुकर्म करता है उसकी अपेक्षा स्वतंत्र इच्छा शक्ति तथा बुद्धि के बल से अनुचित कर्म करने वाला बेहतर है जो शिक्षा साधारण व्यक्ति को जीवन संग्राम में समर्थ नहीं बना सकती, जो मनुष्य में चरित्र बल, परहित–भावना तथा सिंह के समान साहस नहीं ला सकती वह भी कोई शिक्षा है।''** इस प्रकार स्वामी जी की शिक्षा का आदर्श है ''पूर्ण मानव का निर्माण'' उनके अनुसार समस्त शिक्षक प्रशिक्षण का एक मात्र उद्देश्य मनुष्य निर्माण होना चाहिए। शिक्षा का मतलब ऐसी जानकारियों का ढेर नहीं है, जिन्हें मनुष्य के दिमाग में इस तरह ढूँस दिया जाय कि वह उसके दिमाग में जीवन भर अनपची रहकर गड़बड़ी पैदा करती रहें।

एक पूर्ण मानव की शिक्षा का प्रारूप बतलाते हुए स्वामी जी ने स्पष्ट किया कि जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सकें, मनुष्य बन सकें, चरित्र का गठन कर सकें वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है उन्होंने

कहा है कि **''यदि तुम केवल पॉच विचारों को ही पचाकर तदनुसार जीवन और चरित्र गठित कर सके हो तो तुम एक पूरे ग्रन्थालय को कण्ठस्थ कर लेने वाले व्यक्ति की अपेक्षा कहीं अधिक शिक्षित हो।''**

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा के स्वरूप को बतलाते हुए कहा है कि **''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।''** अर्थात शिक्षा का अर्थ है उस पूर्णता को व्यक्त करना जो मनुष्यों में पहले से विद्यमान है। ज्ञान मनुष्य में स्वभाव–सिद्ध है, कोई भी ज्ञान बाहर से नहीं आता समस्त ज्ञान चाहे वह लौकिक हो अथवा आध्यात्मिक मनुष्य के मन में है बहुधा वह प्रकाशित न होकर ढका रहता है और जब यह आवरण धीरे–धीरे हटता जाता है, तो हम कहते है कि 'हम सीख रहे हैं।' ज्यों–ज्यो इस अविष्करण की क्रिया बढ़ती जाती है त्यों–त्यों हमारे ज्ञान की वृद्धि होती जाती है जिस मनुष्य पर से यह आवरण उठता जाता है वह अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक ज्ञानी हो जाता है और जिस पर यह आवरण तह–पर–तह पड़ा हुआ है, वह अज्ञानी है तथा जिस पर से यह आवरण पूरा हट जाता है वह सर्वज्ञ व सर्वदर्शी हो जाता है। इस प्रकार सभी ज्ञान एवं शक्तियॉ मनुष्य के भीतर ही हैं अर्थात मनुष्य की आत्मा से ही सारा ज्ञान आता है आत्मानुभूति होने पर ही मानव दुःख से मुक्त होता है और आनन्द की प्राप्ति होती है।

मानव निर्माण शिक्षा के सम्बन में स्वामी जी का विचार था कि '' हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिससे चरित्र–निर्माण हो मानसिक शक्ति बढ़े, बुद्धि विकसित हो और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा होना सीखे।'' इस प्रकार स्वामी जी ने शिक्षा के उद्देश्य में भी इसी लक्ष्य को ध्यान में रखा है। उनका मानना था कि मनुष्य की सबसे बड़ी विशेषता उसका चरित्र है अस्तु मनुष्य निर्माण करने का अर्थ चरित्र–निर्माण करना है स्वामी जी के अनुसार ''मनुष्य अपने विचारो ंसे बनता है।'' इसलिए बालक–बालिकाओं को अपने सामने उच्च आदर्श रखने चाहिए जैसे वे विचार रखेंगे वैसा ही उसका चरित्र विकास होगा। मनुष्य का चरित्र उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों की समष्टि व मन के समस्त झुकावों का योग होता है। हम वहीं है जो हमारे विचारों ने हमें बनाया है अतः शुभ विचार अच्छे चरित्र की पूॅजी है।

स्वामी जी ने मानव निर्माणकारी शिक्षा में बालक के शारीरिक विकास पर भी बल दिया क्योंकि उनका मानना था कि शारीरिक शिक्षा से दुर्बलता का नास हो सकता है। इसके अतिरिक्त धार्मिक शिक्षा, आर्थिक शिक्षा, सामाजिक और सांस्कृतिक शिक्षा एवं विश्व बन्धुत्व की शिक्षा पर भी बल दिया है।

स्वामी जी ने पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में कहा कि पाठ्यक्रम में निषेधात्मकता न हो बचपन से हमारी शिक्षा ही ऐसी होती है कि उसमें निषेध तथा नकारात्मकता का प्राबल्य होता है जिससे हम यही सीखते है कि हम नगण्य है, नाचीज है निषेधात्मक या निषेध की बुनियाद पर आधारित शिक्षा मृत्यु से भी भयानक होती है।

विवेकानन्द जी ने मनुष्य निर्माण की शिक्षण की आदर्श पद्धति **'एकाग्रता** को बताया। 'मन की एकाग्रता' को शिक्षा का सम्पूर्ण सार व शिक्षा की कुंजी माना है व्यक्ति की शैक्षिक उपलब्धियॉ उसकी एकाग्रता की मात्रा पर निर्भर करती हैं यह एकाग्रता जितनी अधिक होगी उतना ही अधिक मनुष्य ज्ञान लाभ करेंगे, यही ज्ञान लाभ का एकमात्र उपाय है जैसे मोची यदि जरा अधिक मन लगाकर काम करे, तो वह जूतों को अधिक अच्छी तरह से पॉलिश कर सकेगा। रसोईयॉ एकाग्र होने से भोजन को अच्छी तरह से पका सकेगा। अर्थ का उपार्जन हो, चाहे भगवद् आराधना

हो जिस काम में जितनी एकाग्रता होगी वह कार्य उतने ही अच्छे प्रकार से सम्पन्न होगा और एकाग्रता के लिए स्वामी जी ने ब्रह्मचर्य को आवश्यक माना है।

शिक्षक के सम्बन्ध में स्वामी जी का विचार है कि सच्चा शिक्षक वही है जो विद्यार्थी को सिखाने के लिए तत्काल उसी की मनोभूमि पर उतर आए और अपनी आत्मा को अपने छात्र की आत्मा में एकरूप कर सके और जो छात्रों की दृष्टि से देख सके उसी के कानों से सुन सके तथा उसी के मस्तिष्क से समझ सके तथा बालक के स्वाभाविक विकास में योगदान दें। वहीं विद्यार्थी के लिए आवश्यक है कि उसमें पवित्रता, सच्ची ज्ञान–पिपासा और अध्यवसाय हो तन–मन और वचन की शुद्धता हो।

इस प्रकार स्वामी जी शिक्षा के प्रति भारतीय दृष्टिकोण रखने वाले भारतीय संस्कृति के अनन्य पोषक, नव भारत का निर्माण करने वाले एवं समग्र कान्ति के अग्रदूत थे उनका मानव निर्माणकारी शिक्षा दर्शन शिक्षा की व्यापक एवं आधुनिक परिभाषा प्रस्तुत करता है आज का युग आधुनिकता और भौतिकतावादी दृष्टिकोण पर आधारित शिक्षा का प्रबल समर्थन करता है अधिकांश माता–पिता और अभिभावक अपने बच्चों को डॉक्टर, इंजीनियर, आई.ए. एस. बनाना चाहते है परन्तु कोई भी इस ओर ध्यान केन्द्रित नहीं करता है कि पहले उन्हें अपने बालक को अच्छा मानव बनाना है। समाज में हो रहे कुकृत्यों, अपराधों और अमानवीय घटनाओं से हमारा अन्तर्मन यह सोचने पर विवश हो जाता है कि हम किस प्रकार के विकास की ओर बढ़ रहे है अतः आज आवश्यकता है कि हम स्वामी विवेकानन्द जी के शैक्षिक विचारों से प्रेरणा लें और मानव निर्माण की शिक्षा पर विचार करें।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. अवस्थी, ए.पी. (2002), भारतीय राजनीतिक विचारक, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृष्ठ–166–181
2. टण्डन एवं गुप्ता (2009), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आलोक प्रकाशन, लखनऊ पृष्ठ संख्या 258–265
3. पाण्डेय,रामशकल (1995) शिक्षा की दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय पृष्ठभूमि विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा पृष्ठ सं0–198–218
4. पाठक एवं त्यागी (1989) शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. पाण्डेय, रामशकल (2010), उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षक, आगरा
6. जायसवाल, सीताराम (2008) शिक्षा में विचार एवं विधियॉ, प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ, पृष्ठ संख्या 156–169
7. स्वामी विवेकानन्द, शिक्षा (हिन्दी अनुवाद) श्री रामकृष्ण आश्रम, नागपुर।